वर्ष 5, अंक 54-55, अक्टूबर-नवंबर 2019

ISSN 2454-2725

Peer Reviewed Journal

Impact Factor: 1.888 [GIF]

अंक 54-55

बहु-विषयी अंतरराष्ट्रीय मासिक पत्रिका

जनकृति

अक्टूबर-नवंबर 2019

JANKRITI

Multidiciplinary International Monthly Magazine

Editor
Dr. Kumar Gaurav Mishra

संपादक
डॉ. कुमार गौरव मिश्रा

Image by Rodrigo de la torre from Pixabay

Scanned by TapScanner

Impact Factor: 1.888 [GIF]

संपादन मण्डल

परामर्श मंडल

डॉ. सुधा ओम ढींगरा (अमेरिका),प्रो. सरन घई (कनाडा), प्रो. अनिल जनविजय (रूस), प्रो. राज हीरामन (मॉरीशस), प्रो. उदयनारायण सिंह (कोलकाता), स्व. प्रो. ओमकार कौल (दिल्ली), प्रो. चौथीराम यादव (उत्तर प्रदेश), डॉ. हरीश नवल (दिल्ली), डॉ. हरीश अरोड़ा (दिल्ली), डॉ. रमा (दिल्ली), डॉ. प्रेम जन्मेजय (दिल्ली), प्रो.जवरीमल पारख (दिल्ली), पंकज चतुर्वेदी (मध्य प्रदेश), प्रो. रामशरण जोशी (दिल्ली),डॉ. दुर्गा प्रसाद अग्रवाल (राजस्थान), पलाश बिस्वास (कोलकाता), डॉ. कैलाश कुमार मिश्रा (दिल्ली), प्रो. शैलेन्द्र कुमार शर्मा (उज्जैन), ओम पारिक (कोलकाता), प्रो. विजय कौल (जम्मू), प्रो. महेश आनंद (दिल्ली), निसार अली (छत्तीसगढ़),

संपादक

कुमार गौरव मिश्रा

सह-संपादक

जैनेन्द्र (दिल्ली), कविता सिंह चौहान (मध्य प्रदेश)

कला संपादक

विभा परमार

संपादन मंडल

प्रो. कपिल कुमार (दिल्ली), डॉ. नामदेव (दिल्ली), डॉ. पुनीत बिसारिया (उत्तर प्रदेश), डॉ. जितेंद्र श्रीवास्तव (दिल्ली), डॉ. प्रज्ञा (दिल्ली), डॉ. रूपा सिंह (राजस्थान), स्व. तेजिंदर गगन (रायपुर), विमलेश त्रिपाठी (कोलकाता), शंकर नाथ तिवारी (त्रिपुरा), बी.एस. मिरगे (महाराष्ट्र), वीणा भाटिया (दिल्ली), वैभव सिंह (दिल्ली), रचना सिंह (दिल्ली), शैलेन्द्र कुमार शुक्ला (उत्तर प्रदेश), संजय शेफर्ड (दिल्ली), दानी कर्माकार (कोलकाता), राकेश कुमार (दिल्ली), ज्ञान प्रकाश (दिल्ली), प्रदीप त्रिपाठी (महाराष्ट्र), उमेश चंद्र सिरवारी (उत्तर प्रदेश), चन्दन कुमार (गोवा)

सहयोगी

गीता पंडित (दिल्ली)
निलय उपाध्याय (मुंबई, महाराष्ट्र)
मुन्ना कुमार पाण्डेय (दिल्ली)
अविचल गौतम (वर्धा, महाराष्ट्र)
महेंद्र प्रजापति (उत्तर प्रदेश)

विदेश प्रतिनिधि

डॉ. अनीता कपूर (कैलिफोर्निया)
डॉ. शिप्रा शिल्पी (जर्मनी)
राकेश माथुर (लन्दन)
मीना चौपड़ा (टोरंटो, कैनेडा)
पूजा अनिल (स्पेन)
अरुण प्रकाश मिश्र (स्लोवेनिया)
ओल्या गपोनवा (रशिया)
सोहन राही (यूनाइटेड किंगडम)
पूर्णिमा वर्मन (यूएई)
डॉ. गंगा प्रसाद 'गुणशेखर' (चीन)
Ridma Nishadinee Lansakara, University of Colombo, Sri Lanka

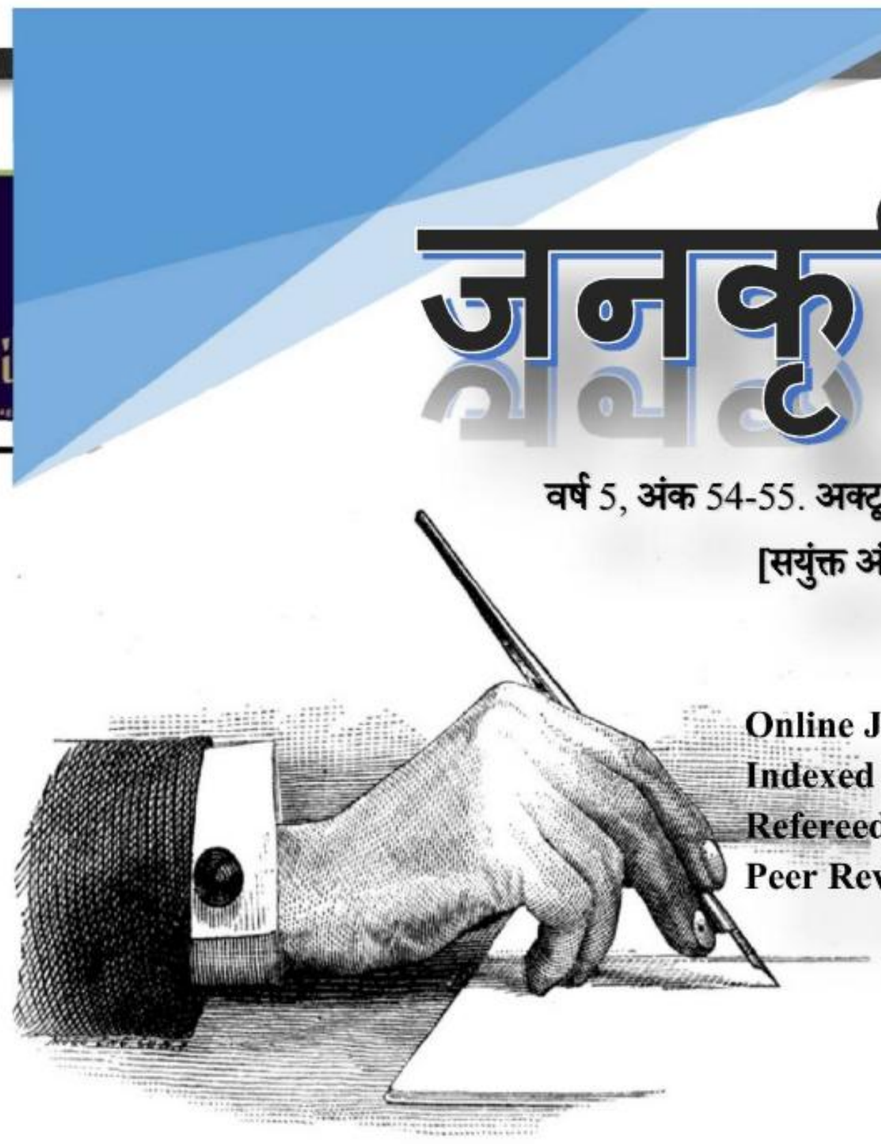

जनकृति

वर्ष 5, अंक 54-55. अक्टूबर-नवंबर 2019

[सयुंक्त अंक]

Online Journal
Indexed Journal
Refereed Journal
Peer Reviewed Journal

INDEX COPERNICUS INTERNATIONAL

International Journal Impact Factor (IJIF)

DRJI

CiteFactor Academic Scientific Journals

(बहुभाषी अंतरराष्ट्रीय मासिक पत्रिका)

International Impact Factor Services

I2OR International Institute of Organized Research (I2OR)

IFSIJ Measure Of Journal Quality

संपर्क

डॉ. कुमार गौरव मिश्रा, G-2, बागेश्वरी अपार्टमेट, आर्यापुरी, रातू रोड़, रांची, झारखंड, भारत

8805408656

वेबसाई-www.jankriti.com

ईमेल- jankritipatrika@gmail.com

Scanned by TapScanner

संपादक की कलम से....

आप सभी पाठकों के समक्ष जनकृति का 54-55 वां सयुंक्त अंक प्रस्तुत है। प्रस्तुत अंक में साहित्य, कला, पत्रकारिता, अनुवाद इत्यादि क्षेत्र से लेख, शोध आलेख प्रकाशित किए गए हैं। पत्रिका के प्रारूप में आंशिक बदलाव करते हुए इस अंक में केवल लेख और शोध आलेख को स्थान दिया गया है, जबकि पत्रिका में साहित्यिक रचनाएँ भी प्रकाशित होती है।

जनकृति वर्तमान में विश्व के दस से अधिक रिसर्च इंडेक्स में शामिल है। इसके अतिरिक्त जनकृति की इकाई विश्वहिंदीजन से विगत दो वर्षों से हिन्दी भाषा सामग्री का संकलन किया जा रहा है साथ ही प्रतिदिन पत्रिकाओं, लेख, रचनाओं का प्रचार-प्रसार किया जाता है। जनकृति की ही एक अन्य इकाई कलासंवाद से कलाजगत की गतिविधियों को आपके समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है साथ ही कलासंवाद पत्रिका का प्रकाशन भी किया जा रहा है। जनकृति के अंतर्गत भविष्य में देश की विभिन्न भाषाओं एवं बोलियों में उपक्रम प्रारंभ करने की योजना है इस कड़ी में जनकृति पंजाबी एवं अन्य भाषाओं पर कार्य जारी है।

जनकृति के द्वारा लेखकों को एक मंच पर लाने के उद्देश्य से विभिन्न देशों की संस्थाओं के साथ मिलकर 'विश्व लेखक मंच' के निर्माण का कार्य जारी है। इस मंच में विश्व की विभिन्न भाषाओं के लेखकों, छात्रों को शामिल किया जा रहा। इस मंच के माध्यम से वैश्विक स्तर पर सृजनात्मक कार्य किये जाएँगे।

धन्यवाद

-कुमार गौरव मिश्रा

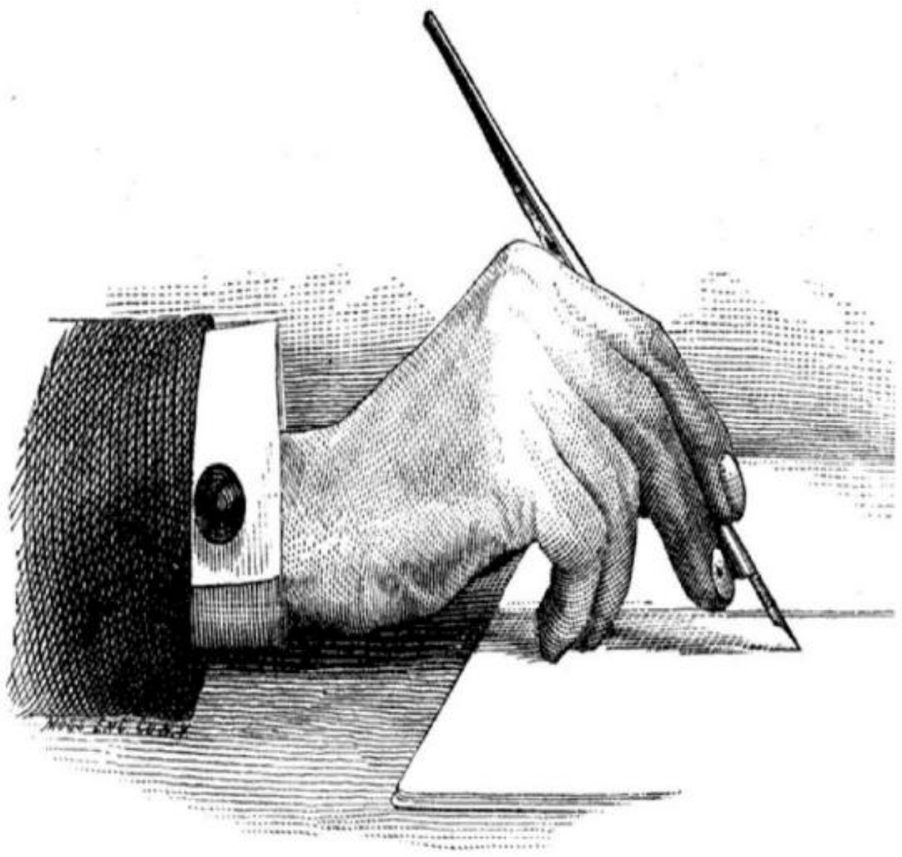

इस अंक में

Scanned by TapScanner

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ संख्या
1.	आत्मकथा में सत्यता की कसौटी और आत्मनिष्ठता का सवाल	डॉ. रंजन पांडेय	06-26
2.	हिंदी नवजागरण और यशोधरा	डॉ. राजेश कुमार शर्मा	27-39
3.	हिन्दी कहानी का सौन्दर्य : चिंतन और विश्लेषण	डॉ. प्रवीण कुमार	40-62
4.	प्रवासी साहित्य और इंग्लैण्ड के साहित्यकार	स्वर्णलता ठन्ना	63-70
5.	पुर्नजागरण का आरंभ : प्रगतिशील रचनाकार नागार्जुन	डॉ. प्रियंका	71-85
6.	यादों के कैमरे में कैद उत्तराखंड	डॉ. निरंजन कुमार यादव	86-95
7.	भक्ति आंदोलन और कबीर की सामाजिक दृष्टि	सोनपाल सिंह	87-102
8.	प्रेमचंद और मुक्तिपथ	डॉ. राम बिनोद रे	103-111
9.	रामचरितमानस की उपलब्ध विविध पांडुलिपियाँ और उनका रचनाक्रम	अमन कुमार	112-119
10.	राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में चित्रित मुस्लिम समाज	सरस्वती जायसवाल	120-124
11.	हिन्दी उपन्यासों में मुस्लिम समाज : कितना यथार्थ कितना झूठ	डॉ. हसन पठान	125-138
12.	मराठी लोकनागर रंगभूमी : नाट्यलेखन-नाट्यप्रयोग के परिप्रेक्ष्य में	डॉ. सतीश पावडे	139-151
13.	सिनेमाई शिल्प के आधार तत्व	डॉ. सुरभि विप्लव	152-159
14.	भारतीय सिनेमा में साम्प्रदायिकता	तेजस पूनिया	160-168
15.	मधुबनी लोककला के विविध रंगों में मैथिल स्त्री की संवेदना	डॉ.प्रियंका कुमारी	169-177

+....

Scanned by TapScanner

Jankriti

Multidisciplinary International Magazine
ISSN: 2454-2725, Impact Factor: GIF 1.888
www.jankritipatrika.com
Volume 5, Issue 54-55, October-November 2019

जनकृति

बहू-विषयी अंतराराष्ट्रीय पत्रिका
ISSN: 2454-2725, Impact Factor: GIF 1.888
www.jankritipatrika.com
वर्ष 5, अंक 54-55,अक्टूबर-नवंबर 2019

प्रेमचंद और मुक्तिपथ

– डॉ. राम बिनोद रे,
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग, केरल केन्द्रीय विश्वविद्यालय

रचनाकार समाज में रहकर उसकी आंतरिक संवेदनाओं की अभिव्यक्ति करता है। उन्हीं संवेदनाओं के माध्यम से हम सामाजिक गतिविधियों से रूबरू होते हैं। इसमें वेदना, संत्रास, उपेक्षा आदि सामाजिक, सांस्कृतिक विषमताएँ विद्यमान होती हैं। दलित उन्हीं मानसिक व व्यावहारिक विषमताओं का प्रतिफलन है। एक मानसिक विषमताओं के प्रति विद्रोह है। भारतीय इतिहास में वर्णों का विभाजन आर्यों द्वारा रंगभेद और अपनी सुविधा हेतु पहचान को अंतर बनाए रखने के लिए किया था धीरे–धीरे यह इतने कठोर होते गए कि कालांतर में इससे उत्पन्न अनेक विषमताएँ पैदा होने लगे। यदि एक नज़र में देखा जाए तो यह मानसिक उत्पीड़न का प्रतिफलन है। मानवीय एकता और जातीय एकता का विखंडन है चूंकि जाति वह मानव समुदाय है जिसमें खान–पान, रहन–सहन, रीतिरिवाज, वेशभूषा, एक समान हो। ''वर्ण–धर्म का मूल लक्ष्य चाहे जो रहा हो इसमें लोगों में एक मिथ्या अभिमान की भावना आई और निचले वर्गों का तिरस्कार होने लगा जिस प्रकार धर्म का वास्तविक अर्थ भूल कर धर्म के साधनों एवं बाह्य चिन्हों को ही धर्म समझ लिया गया था उसी प्रकार वर्ण धर्म के मूल लक्ष्य को भुलाकर केवल पृथकता और मिथ्याभिमान ही प्रधान हो उठे''(1) दलित शब्द की उत्पत्ति अचानक नहीं हुई है बल्कि एक सोची समझी रणनीति है जिसके तहत सम्पूर्ण प्राकृतिक सम्पदा को अपने काबज में करना, आत्मिक श्रेष्ठता को प्रतिबद्ध रूप से स्वीकार करवाना आदि मुख्य लक्ष्य रहा है परिणामतः आंदोलन के रूप में हम साहित्य में देख पाते हैं। इसी प्रकार आर्य आए और भारतीय प्रजातियों पर अपना राज्य सत्ता कायम करने हेतु 'बाँटो और राज्य करो' की नीति अपनाई गई। सम्पूर्ण समाज को चार वर्णों में विभाजित किया ।

Scanned by TapScanner

पूर्व वैदिक युग

आर्य (श्वेत) शासन — उत्तर वैदिक युग — ब्राह्मण

→ अनार्य (श्याम) → क्षत्रिय, द्विज

→ दास → वैश्य

→ शूद्र

राजसत्ता को सुचारु रूप से संचालन हेतु चार वर्णों में विभाजित कर जिस वर्ण को सबसे अधिक दबाया गया वह था 'शूद्र' जिसका दलन किया गया। जो शोषित, पीड़ित, प्रताड़ित, घ्रणित है। ओमप्रकाश वाल्मीकि जी ने चार्तुवर्ण को सवर्ण के रूप में स्वीकार किया। शूद्र में दो परिवर्तन किए गए जिसे हम निम्न रूप में समझ सकते हैं – चातुर्वर्ण (सवर्ण) – ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र

शूद्र □ शूद्र, अस्पृश्य (अवर्ण)

''एक शूद्रों से नीचे एक और वर्ण बनाया गया जिसे अस्पृश्य या अंत्यज के नाम से पुकारा गया – जैसे सवर्ण–अवर्ण, द्विज–अद्विज। सवर्ण का अर्थ – ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र। अवण का अर्थ – अस्पृश्य, अछूत, अंत्यज, अतिशूद्र अर्थात जिसका कोई वर्ण नहीं''(2)।

एक तरफ जोतीराव फूले जी 1827–1890 तक जिन्होंने 'गुलामगीरी' लिखा, डॉ अम्बेडकर का समय 1891–1956 'शूद्र कौन थे' पुस्तक लिखा तो दूसरी ओर गाँधी जी और प्रेमचंद जी जो अपनी दृष्टि से जातीय संकल्पना को देखने व समझने का प्रयास कर रहे थे। डॉ. भीमराव अम्बेडकर कहते हैं – ''दलित शब्द एक चिंगारी की तरह दबे–कुचले लोगों की अभिव्यक्ति के साथ जुड़कर आज संघर्ष और अस्मिता का प्रतीक बन गया है गैर दलित ही नहीं कुछ ऐसे बुद्धिजीवी भी हैं जिन्हें यह शब्द अपमानबोधक लगता है।(3)

Scanned by TapScanner

हम निम्नलिखित सारणी से दलित शोषण की विविध कड़ी को समझ सकते हैं।

दिलत अनपढ़ महिला गरीब	⇨	दलित महिला अनपढ़	⇨	दलित पुरुष अनपढ़ गरीब	⇨	दलित पुरुष अनपढ़	⇨	दलित महिला पढ़ा लिखा	⇨	दलित पुरुष पढ़ा लिखा

निम्नांकित सारणी में पहले और दूसरे में डॉ. अम्बेड़कर और जोतीराव फूले की दृष्टि जिसमें दलित महिला अनपढ़ और गरीब उनका शोषण तीव्रतर रूप में होता .. उनकी दशा दयनीय थी दूसरी तरफ गांधी जी और प्रेमचंद जी दलित पुरुष अनपढ़ गरीब आदि का उल्लेख अपने साहित्य में करते पाए जाते हैं। तीसरा रूप हमें दलित पुरुष अनपढ़, दलित महिला पढ़ा लिखा और दलित पुरुष पढ़ा लिखा जिनका शोषण भरपूर मात्रा में उनके कार्यस्थल, समाज में हो रहा है। जिसे हम दलित साहित्य, दलित वैचारिक विमर्श में बखूबी देख पाते हैं।

दलित साहित्य एक विरासत के रूप में हमें एक सूक्ष्म पद्धति से सारणी के रूप में प्राप्त होते हैं।

यथार्थवाद ⇒ आदर्शवाद ⇒ आदर्शोन्मुख यथार्थवाद ⇒ नग्न यथार्थवाद ⇒ जादुई यथार्थवाद

दलित साहित्य यथार्थवादी आदर्शवादी से बहते हुए आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की ओर अग्रसर होता बाद में यथार्थ से आगे निकलकर नग्नयथार्थवाद होते हुए जादुई यथार्थवाद जिसे हम हरिशंकर परसाई ने भोलाराम का जीव, हीरालाल का भूत आदि में देख पाते हैं। कथा सम्राट मुंशी प्रेमचंद अपने समय के सरोकारों से अनभिज्ञ न थे वे सदैव अपने कथा माध्यमों से आम लोगों की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, नैतिक, व्यावसायिक, सैद्धांतिक तत्वों को कल्पना के रंग में पिरोकर प्रस्तुत करते रहे। जहाँ उस समय भारतीय मानस पटल में साहित्य के रूप में तिलस्मी, अयारी का भाव छिपा था उस समय मानस पटल के कैनवास में एक नया स्केच तैयार किया जिसमें संघर्ष, टूटन, बाधा, न्याय, उत्पीड़न व मानसिक वैमनस्य उद्वेलन था। मनोरंजन और कपोल कल्पना से बाहर निकल कर यथार्थ जीवन की सचाई को उकेरा है। विद्यार्थी जीवन में प्रेमचंद

Scanned by TapScanner

''तिलस्म होशरुबा'' और बंगला से अनूदित साहित्य से वाकिफ हो चुके थे। अज्ञेय, प्रेमचंद को महाकरुणा के वेग से प्रज्ज्वलित मानते हैं। अमीर–गरीब शोषक–शोषित के मध्य फैले वेदना त्रास को बखूबी पहचानते हैं।

प्रेमचंद संवेदनशील कथाकार हैं उनकी संवेदना बाह्य आंतरिक द्वंद्वात्मक प्रक्रिया का परिणाम है चूंकि साहित्य जीवन के अनुभवों का द्वंद्वात्मक परिणाम है प्रेमचंद स्वयं लिखते हैं – ''साहित्य में रचनाकार जीवन को सृजित कर पुनःसृजित से प्रतिक्रिया व्यक्त करता है इस पृष्ठभूमि में विचारधारा सक्रिय रहती है।(4) वे आगे लिखते हैं ''जो हो जब तक साहित्य का काम केवल मन बहलाव का सामान जुटाना, केवल लोरियां गाकर, केवल आंसू बहाकर जी हल्का करना था, तब इसके लिए कर्म की आवश्यकता न थी ..... हमारी कसौटी पर वही साहित्य खरा उतरेगा, जिसमें उच्च चिंतन हो, स्वाधीनता का भाव हो, सौन्दर्य का सार हो, सृजन की आत्मा हो, जीवन की समस्याओं का प्रकाश हो – जो हममें गति और बेचैनी पैदा करे, सुलाए नहीं क्योंकि अब और ज्यादा सोना मृत्यु का लक्षण है''(5) प्रेमचंद किसी वाद, विमर्श, युग में आकर साहित्य का सृजन नहीं करते हैं उन्हें बांधना मुक्तिपथ को बांधना है वे समाज को नए सांचे मे ढालने के प्रयास करते हैं। यथार्थ और मनोरंजन के मध्य नई भूमि तैयार करते हैं जिसमें प्रेमप्रसंग, वितृष्णा, धोखा, संकुचित मानसिकता केन्द्रभूत है। जैनेन्द्र जी ने यहाँ तक कह डाला कि प्रेमचंद को किसी वाद में नहीं डाला जा सकता है। 1920–1936 के साहित्य में दलित समाज की एक छवि है वह छवि काल्पनिक नहीं बल्कि सृजनात्मक यथार्थ है। वे सवर्णों को समाज में मिथ्या आडम्बरों के प्रचार–प्रसार अहम् भागेदारी मानते हैं। किस प्रकार मिथ्या आडम्बरों के कारण मानवता का नाश होने लगता है। ''गोदान'' में गोबर और झुनिया के प्रेम प्रसंग में गोबर झुनिया को छोड़ कर लखनऊ भाग जाता है ''होरी के मन में द्वंद्व चलता है झुनिया को घर में कैसे रखे, जाति का मामला है, लेकिन अगर वह न रहेगा तो बेचारी कहाँ जाएगी? आखिर मानवता की विजय होती है(6) होरी झुनिया को घर में रखकर पंचायत का दंड स्वीकार करने का निश्चय करता है धनिया कहती है – मानमर्यादा के कारण किसी जीव की हत्या करना उचित नहीं है। होरी कहता है – ''बिरादरी के डर से

Scanned by TapScanner

हत्यारे का काम नहीं कर सकता''(7) समाज का सामान्य जन जातीयता के कारण दंड स्वरूप कर्ज में डूब जाता है।

प्रेमचंद के साहित्य पर समय–समय पर अनेक आरोप–प्रत्यारोप लगे हैं। उनके आरंभिक साहित्य को सवर्ण विरोधी मानकर अनेक छायावादी रचनाकारों ने दरकिनार कर दिया था। वे मूलतः कथावस्तु में पात्र व चरित्र निर्माण आदर्शात्मक तत्वों के आधार पर करते हैं जो बाद में आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की ओर बढ़ जाता है। इनके पात्र संघर्ष से जूझते हुए संघर्षरत हैं यह आरोप लगाया जाता है कि जातिगत समस्या उठाया गया परन्तु उसके समाधान हेतु उपाय नहीं ढूंढे गए ओम प्रकाश वाल्मीकि जी लिखते हैं ''स्वामिनी, पूस की रात, अलग्योछा, आधार, लालफीता, दो बैलों की कथा, प्रेम का उदय, कजाकी, आत्माराम, पशु से मनुष्य, विषय समस्या, बलिदान विध्वंस आदि दलित कहानियों में दलित–पिछड़ी जातियों को केंद्र में रखा गया, जिनमें कुर्मी गोंड, काछी' पासी, धोबी, अहीर, गडरिया, माली, सुनार, भंगी, चमार आदि शामिल थे ..... राष्ट्रीय आंदोलन में गाँधीजी के विचारों का गहरा प्रभाव था; इसलिए इन जातियों की समस्याओं का निदान भी वे इसी दृष्टिकोण से ढूंढने की कोशिश कर रहे थे''(8) प्रेमचंद मिथ्या अभिमान पर चोट करते हैं समाज का ढकोसलान सांस्कृतिक व राजनीतिक गतिविधियों का अंग बनकर एक विशेष प्रकार का अंतराल पैदा करता है ''सद्गति'' कहानी में ''श्रेष्ठता के मिथ्या अभिमान ने उनकी मानवता को नष्ट कर दिया''(9) ''ठाकुर का कुआ'' में जातीय व्यवस्था के कारण गंदा पानी पीने को मजबूर है। जोखू बीमार है प्यास के कारण व्याकुल है मजबूरी में गंदा पानी पीता है और आक्रोश में कहता है ''यह कैसा पानी है? और बास के पिया नहीं जाता गला सूखा जा रहा है तू सड़ा पानी पिलाई देती है।(10) जोखू की पत्नी बार–बार प्रश्न करती है ''हम क्यों नीच हैं और ये लोग क्यों ऊँच हैं''(11) चूंकि प्रकृति द्वारा प्रदत्त सम्पत्ति का वर्णभेद के आधार पर बंटवारा क्यों प्रेमचंद से पूर्व शूद्रादि और अतिशूद्रों की मुक्ति हेतु जोतीराव फूले की ''गुलामगीरी'' में रंगभेद के खिलाफ और बाबा भीमराव अम्बेडकर जी के ''शूद्र कौन थे'' में इस जातीय दंशता को व्यक्त कर चुके थे। यही संघर्ष हम ओमप्रकाश वाल्मीकि अपनी आत्मकथा में लिखते हैं कि किस प्रकार उन्हें जातिसूचक शब्द कहकर हीनता स्वीकार करवाया

Scanned by TapScanner

जाता था मसलन नल में हाथ न लगने देना, कक्षा में अंतिम श्रेणी में बिठाना, चुहड़े कह कर पुकारना ''अबे चुहड़े के दूर हट बदबू आ रही है''(12) प्रेमचंद ने वर्णव्यवस्था की समस्या की ओर संकेत मात्र किया है इस समस्या का विस्तार पूर्वक चित्रण बाद के रचनाकारों में देख पाते हैं। चूंकि वाल्मीकि जी भोगे हुए यथार्थ को कैनवास में उतारते हैं। व्यक्ति को सर्वप्रथम अपनी जाति, परिवार, समाज, परिवेश से संघर्ष करना पड़ता है। वर्णगत समस्या में कल्पना की लम्बी छलांगे नहीं लगाई जाती बल्कि यह आंतरिक और बाह्य द्वंद्वात्मक प्रक्रिया का परिणाम है ''कहानी में पिरोए शब्द! प्रसव कुनबा! चमार, प्रसव पीड़ा का दृश्य कितने यथार्थवादी है और कितने कल्पना आधारित शायद विद्वानों ने इन तथ्यों पर सोचने समझने की जरूरत नहीं समझी''(13) पूस की रात में हल्कू अपने जीवन के उलझनों के प्रति एक छटपटाहट है एक मीठी नींद की बेचैनी है इसी प्रकार सवा 'सेर गेहूँ' में शंकर किस प्रकार सत्कार के लिए वर्णव्यवस्था की आड़ में गुलामी के जंजीरों में फंस जाता है ''लेकिन इस बात का डर तो शंकर को हो सकता है – ''गरीबों को हो सकता है, नीची जातिवालों को हो सकता है भला जो बह्म का बिरादर है उसे इसकी क्या चिंता? वहाँ का डर तुम्हें होगा मुझे क्यों होने लगा वहाँ तो सब अपने ही बंधु हैं ऋषि–मुनि सब तो ब्राह्मण ही हैं, देवता ब्राह्मण हैं जो कुछ बनेगा बिगड़ेगा, संभाल लेंगे''(14) 'पूस की रात' का हल्कू और 'सवा सेर गेहूं' का शंकर यातना से भरी व्यवस्था को भोगता है और आज भी भोग रहा है। जन्ममुक्ति को केंद्र मे रखकर समाज के उस नंगे यथार्थ को प्रस्तुत किया ''अपने समय यथार्थ को उसके समूचे नंगेपन के साथ उजागर करते हुए भी, उसके प्रति तनिक भी रोमानी अथवा भावुक न होते हुए भी प्रेमचंद भविष्य के प्रति निराश नहीं होते, सत्य के सूर्य में चमकने पर अपनी अकृत्रिम आस्था व्यक्त करते हैं''।(15)

प्रेमचंद घीसू–माधव जैसे पात्र के माध्यम से उस यथार्थ पर आघात पहुँचाते हैं चूंकि कहानी का आरम्भ ''चमारों का कुनबा'' से होता है इस पर अनेक आरोप–प्रत्यारोप लगे हैं। ओमप्रकाश वाल्मीकि लिखते हैं कि ''एक हिन्दू की दृष्टि में आज भी एक दलित नकारा, निकम्मा, कामचोर, असभ्य, स्वार्थी, चोर, अमानवीय आदि भी हो सकता है''(16) ओम प्रकाश वाल्मीकि जी जाति शब्द को वैमनस्य पैदा करने का कारण मानते हैं?

Scanned by TapScanner

''हिन्दू मानसिकता इस व्यवस्था द्वारा संचालित होती थी जिसमें स्व जाति दूसरे के ऊपर खड़ी है। जहाँ प्रेम नहीं सिर्फ घृणा है'' ।[17] इसी प्रकार शम्भुनाथ लिखते हैं ''कफन कहानी में दलित पात्र घीसू माधव क्या स्तब्ध और विजड़ित संवेदना के कमजोर पात्र हैं जैसा कि राजेंद्र यादव, गिरिराज किशोर आदि ने कहा है?''[18] प्रेमचंद दलित पात्रों के प्रति सहानुभूति नहीं बल्कि पात्रों के माध्यम से यथार्थ के प्रति गहरा आघात है घीसू माधव जैसे पात्र किसी भी समाज, वर्ग, जाति, समुदाय में हो सकता है प्रेमचंद चाहते तो बिना जाति सूचक शब्द का प्रयोग किए कथा में गतिशीलता ला सकते थे। ''सौभाग्य के कोड़े'' कहानी में नथुवा संगीत कला में निपुण होने के कारण समाज में अपनी पहचान स्थापित करने की कोशिश करता है परन्तु सामाजिक विसंगतियों ने उसे संदेह के घेरे में रखा है और रायसाहब का रत्ना से विवाह घुसपैठिये में देख पाते हैं इंदु और नथुवा की परिस्थिति भिन्न होने के बावजूद इंदु की परिस्थिति से निकलना और नथुवा विकासशील जीवनी की ओर बढ़ना चाहती है ''वह इसी कोशिश में लगी रहती थी कि आस पड़ोस के लोग उनके बारे में न जान पाए कि वे कौन है उसे यह सब बहुत सुरक्षित लगता था। लेकिन राकेश उनकी व्यथा कथा से विचलित हो गया था उसे महसूस हो रहा था कि वे सब किसी घने जंगल में फंस गए हैं जहां चारों ओर सिर्फ अँधेरा है या कंटीले झाड़–झँकार''[19] राकेश पलायनवाद में विश्वास नहीं करता बल्कि जूझते नज़र आते है ठीक उसी प्रकार जयप्रकाश कर्दम की कहानी में ''नो बार'' में सम्पूर्णता में भी अपूर्णता का आभाव करवाया जाता है। ''खून सफेद'' कहानी में साधोराम अपनी सुख सुविधाओं के लिए धर्म परिवर्तन कर लेता है। घर लौटते घरवाले स्वीकार नहीं करते। ''मंत्र'' कहानी में जातीय संकीर्ण मनोवृतियों के यथार्थ चित्र को कैनवास में उतारा है। सवर्ण द्वारा अवर्ण से शिक्षा ग्रहण करना एक सामाजिक विडम्बना के रूप में प्रस्तुत किया है अवर्ण चाहे कितनी भी शिक्षा ग्रहण कर ले उसे कुंठित मानविकता का शिकार होना पड़ता है। मुक्तिपर्व उपन्यास में अध्यापकों द्वारा अपमान किये जाने के बावजूद सुनीत एक अच्छा अध्यापक बनता है। ''अपने–अपने पिंजरे'' में भोगे हुए यथार्थ को प्रस्तुत करते हुए नैमिशराय जी ''मंदिरों के सवर्णों के लिए हम शूद्र थे, अछूत थे, दलित थे, पर इन्सान न थे''[20] इसी प्रकार वीरांगना झलकारी बाई वीर शौर्य से पूर्ण होने के बावजूद

Scanned by TapScanner

निम्नजाति होने पर उपेक्षा का भाव सहना पड़ता है जिस समस्या की ओर उसकी मुक्ति का आह्वान नामिशराय जी मुक्तिपर्व में किया। बंशी नवाब अलीवर्दी खा के गुस्से का शिकार होनां पड़ा और पशुओं सा व्यवहार सहना पड़ा है। तुलसीदास का मुर्दहिया और मणिकर्णिका में आज़मगढ़ से लेकर बनारस और बनारस से दिल्ली के मध्य अपने आत्मकथा में प्रस्तुत किया है। श्योजराज सिंह बेचैन ने ''मेरा बचपन मेरे कंधों पर'', कौशल्या वेसंत्री की ''दोहरा अभिशाप'' दलित महिला की पहली आत्मकथा, सुशीला टांकभोरे की ''शिकंजे का दर्द'' में वेदना और संघर्ष के बीच मानवीय संवेदना को क्षत–विक्षत करने का प्रयास किया गया है। आजादी से पहले समाज का एक सपना था उस सपने के यथार्थ रूप का चित्रण किया गया। आजादी के पैंसठ सालों बाद समस्या जस के तस है बस वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप समाज के आर्थिक नीतियों में बदलाव आया है जिसके तहत शोषणकारी नीतियां बदल गई हैं।

संदर्भ

1. संतोष लूथरा, *प्रेमचंद और प्रसाद के साहित्य की मुल्वर्ती चेतना,* प्रकाशन संस्थान, दिल्ली विश्वविद्यालय, पृष्टः–118 : 1996

2. ओमप्रकाश वाल्मीकि, *सफाई देवता,* राधाकृष्ण प्रकाशन, पृ:19, 2009

3. ओमप्रकाश वाल्मीकि, *दलित साहित्य अनुभव, संघर्ष एवं यथार्थ,* राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली पृष्टः73, 2013

4. डॉ. रामबक्ष, (आलोचना – 51–52), *प्रेमचंद की विचारधारा और उसका सामाजिक आधार,* प्रेमचंद विशेषांक, पृष्ट–63

5. डॉ. रामबक्ष, (आलोचना – 51–52), *प्रेमचंद की विचारधारा और उसका सामाजिक आधार,* प्रेमचंद विशेषांक, पृष्ट–63

6. धर्म ध्वज त्रिपाठी, *प्रेमचंद कथा साहित्य : समीक्षा और मूल्यांकन,* प्रेम प्रकाशन मंदिर, दिल्ली, पृष्ट–173, 1988

7. राजेश्वर गुरु, *गोदान,* सम्प., राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ट – 55–56, 2010

8. राजेश्वर गुरु, *गोदान,* सम्प., राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ट – 56, 2010

9. ओमप्रकाश वाल्मीकि, *दलित साहित्य : अनुभव, संघर्ष एवं यथार्थ,* राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली पृष्टः138, 2013

Scanned by TapScanner

10. संतोष लूथरा, *प्रेमचंद और प्रसाद के साहित्य की मुल्वर्ती चेतना,* प्रकाशन संस्थान, दिल्ली विश्वविद्यालय, पृष्टः—119, 1996

11. प्रेमचंद, *ठाकुर का कुआ,* मानसरोवर भाग—1, सुमित प्रकाशन, 2005

12. प्रेमचंद, *ठाकुर का कुआ,* मानसरोवर भाग—1, सुमित प्रकाशन, 2005

13. ओम प्रकाश वाल्मीकि, *जूठन,* राधाकृष्ण प्रकाशन, पृष्ट—13, 2013

14. ओमप्रकाश वाल्मीकि, *दलित साहित्य, अनुभव, संघर्ष एवं यथार्थ,* राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली पृष्ट—74, 2013

15. प्रेमचंद, *सवा सेर गेहूं,* मानसरोवर भाग—4, सुमित प्रकाशन, 2005

16. शिवकुमार मिश्र, *प्रेमचंद विरासत का सवाल,* वाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ट—107, 2008

17. ओमप्रकाश वाल्मीकि, *दलित साहित्य, अनुभव, संघर्ष एवं यथार्थ,* राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली पृष्ट—108, 2013

18. ओम प्रकाश वाल्मीकि, *सफाई देवता,* राधाकृष्ण प्रकाशन, पृ. — 22, 2009

19. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, *प्रेमचंद*—संपदान, प्रकाशन संस्थान, पृष्ट—55, 2009

20. मोहनदास नैमिशराय, *अपने—अपने पिंजरे,* वाणी प्रकाशन, पृष्ट—27, 1995

Scanned by TapScanner